IJEAR Vol. 6, Issue 1, Spl-1, Jan-June 2016 ISSN : 2348-0033 (Online) | ISSN : 2249-4944 (Print)

f'k{kk dh x|.koRrk ,o f'k{kdk dh i|xfr d fy, i|f'k{k.k dh vko';drk

_ pk jk?ko
'kk/kkFkh

भारत में प्राचीन काल से ही गुरू को सर्वोच्च स्थान दिया जाता है। बालक का भविष्य तभी उज्जवल हो सकता है जब उसकी शिक्षा दीक्षा योग्य शिक्षकों की देख रेख में हुई हो, क्योंकि शिक्षक ही बालक के भविष्य निर्माण का आधार होता है। वर्तमान समय में गिरते शैक्षिक मूल्य और बढती बेरोजगारी की अवस्था में शिक्षकों की स्थिति काफी दयनीय होती जा रही है। समाज में शिक्षकों को काफी हेय दृष्टि से देखा जाने लगा है।

आज के समय में जो शिक्षक की गरिमा में कमी आई है उसकी वजह से योग्य व्यक्ति शिक्षक बनने से बचने के मार्ग देखने लगे हैं। इसका प्रमुख कारण है कि शिक्षकों को समाज में अन्य व्यवसायों में लगे व्यक्तियों की अपेक्षा कम पारिश्रमिक और सुविधाओं का दिया जाना है।

प्राचीनकाल से ही यह धारणा चली आ रही है कि जिस देश का शिक्षक जितना ज्ञानवान तथा समृद्ध होगा, उस देश के नागरिक भी उतने ही प्रबुद्ध और विकासशील होगें क्योंकि अध्यापन एक कला है जिसमें भारत प्राचीनकाल से ही सर्वोपरि रहा है। अध्यापक के ऊपर ही राष्ट्र का हित एवं उन्नति निर्भर होती है। अध्यापक समाज से अज्ञानरूपी अंधकार को मिटाता है। स्वयं एक दीपक की भांति जलकर दुनिया तथा देश को प्रकाशित करता है। डॉ राधाकृष्णन् ने शिक्षक के विशय में कहा है कि –"समाज में अध्यापक का स्थान बड़ा ही महत्वपूर्ण है। वह एक पीढी से दूसरी पीढी को बौद्विक परम्पराएँ तथा तकनीकी कौशल पहुँचाने का केन्द्र है और सभ्यता के प्रकाश को प्रज्जवल रखने में सहायक होता है।" 1

वैदिककाल में गुरूकुल में शिक्षा देने का प्रावधान था। इस काल में अध्यापक तथा छात्रों के मध्य संबंध अत्यन्त मधुर व आध्यात्मिक थे। इस काल में ही शिक्षक प्रशिक्षण का विकास हो चुका था। अध्यापक का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण व सम्मानित स्थान होता था। गुरूकुल में गुरू माता – पिता के समान स्नेह, प्रेम एवं भरण पोषण करता था। गुरू का कर्तव्य होता था कि वह शिष्यों को अधंकार से प्रकाश में लाए जैसा कि कबीर दास जी ने कहा है कि–

lrx|: dh efgek vur vur fd;k mixkjA
ykpu vur m?kkfM;k vur fn[kko.kgkjAA 2

गुरू की महिमा का वर्णन सदियों से भारतीय परम्परा में चला आ रहा है। सूफी कवि जायसी भी गुरू की महिमा का वर्णन करते हुए कहते हैं–

x|: l|vk ekfg iUFk fn[kkokA fcu| x|: txr dk fux|u ikokA 3

मध्यकालीन शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य धार्मिक प्रचार रहा। उस समय शासक वर्ग शिक्षा के नाम पर सिर्फ धार्मिक प्रचार का काम करते थे। इस काल में शिक्षा की गुणवत्ता पर एवं शिक्षकों के प्रशिक्षण पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। शिक्षक सिर्फ परिवारवाद और परम्परावाद के अनुसार ही तैयार होते थे। विदेशी आक्रमणों ने हमारे शिक्षा तन्त्र का बड़ा नुकसान इस युग में हुआ। इस समय में हमारे शिक्षा केन्द्रों को खुल कर लूटा तथा मुस्लिम एवं इस्लाम का बोलबाला रहा। इस काल में शिक्षक का स्थान निम्नतर होता चला गया। इस युग में अध्यापन का कार्य पंडित तथा मौलवी करते थें। अंग्रेजी शासनकाल में कुछ स्वतन्त्र रूप से गठित संस्थाओं ने शिक्षकों को प्रशिक्षित करने का बहुत ही सराहनीय कार्य किया। बहुत सी संस्थाओं ने शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया जिन्होनें शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाया जिससे समाज में उत्तम व्यक्तित्व का निर्माण संभव हुआ। पाश्चात्य विचारक रॉस ने शिक्षा व्यवस्था में शिक्षक के स्थान को स्पष्ट करते हुए लिखा है– "उसका स्थान, यदि कोई है, तो दृश्यों के पीछे है, वह सूचना, विचार, आदर्श अथवा संकल्प–शक्ति देने वाला अथवा चरित्र निर्माण करने वाला न होकर बालक के विकास का निरीक्षण है। "

शिक्षक समाज के विकास की धुरी है जिस पर सम्पूर्ण समाज एवं राष्ट्र का विकास निर्भर करता है, अतः शिक्षकों में उत्तम गुणों के विकास के लिए प्रशिक्षण की विशेष आवश्यकता है। प्रत्येक राष्ट्र एवं समाज को शिक्षक प्रशिक्षण की तरफ विशेष ध्यान देना चाहिए। फॉब्रेल के शब्दों में "विद्यालय रूपी बाग में अध्यापक रूपी माली विद्यार्थी रूपी पौधों के विकास में सहयोग देते है। यह सहयोग वे तभी दे सकते है जब उन्हें बच्चों की प्रकृति का स्पष्ट ज्ञान हो। अतः अध्यापक में छात्रों को समझने और उनका उचित ढंग से विकास कर सकने की शक्ति भी होनी चाहिए। "

फॉब्रेल के विचारों की पूर्ति तभी संभव है जब शिक्षकों को अच्छी तरह से प्रशिक्षित जाए। अतः शिक्षक के व्यक्तित्व के लिए उसका प्रशिक्षण प्राप्त करना अति आवश्यक है। शिक्षक के ज्ञानकोष में समय –समय पर नवीन अध्याय जुडते रहते हैं। इसलिए शिक्षक को भी जीवन में एक बार प्रशिक्षण लेने से ही संतुष्ट नहीं होना चाहिए। उसे समय समय पर अपने ज्ञान को बढाने के लिए प्रयास करते रहना चाहिए। वर्तमान समय में शिक्षक को कक्षा में पढाने में ही कुशल बनाना प्रशिक्षण का वास्तविक उद्देश्य नहीं, अपितु शिक्षा के मूल आधार धार्मिक, राजनैतिक, अर्थिक, दार्शनिक, मनोविज्ञान और विज्ञान, शैक्षिक तकनीकि का साधारण ज्ञान भी कराया जाता है, जिसके माध्यम से वह छात्रों का सर्वांगीण विकास करने का पूर्ण प्रयास कर सकें। इस प्रकार की शैक्षिक नीति होनी चाहिए जो छात्रों एवं शिक्षकों को चरित्रवान, कर्तव्यनिष्ठ और आर्दश नागरिक बनाने में सहयोग प्रदान करें तथा उन्हें शारिरिक एवं मानसिक श्रम के महत्व का ज्ञान कराया जाए। इस प्रकार हमारे देशा में कुशल एवं देश भक्त शिक्षकों का निर्माण होगा और देश के विकास की गति तीव्र होगी।

शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने के लिए प्राचीन काल से ही प्रयास किये जा रहे हैं। यह सर्वविदित है कि किसी भी राष्ट्र की प्रगति और विकास में शिक्षा का महत्वपूर्व योगदान होता है। बेहतर शिक्षा राष्ट्र को बेहतर शिक्षकों की देखरेख में ही संभव है। बेहतर शिक्षक विपरीत परिस्थितियों में भी किसी व्यक्ति की जिन्दगीं में ज्ञान, संस्कार, मूल्य और प्रतिबद्वता पैदा कर सकती है। सामाजिक मान्यता है कि शिक्षक जन्मजात होते हैं, किन्तु देशकाल एवं वातावरण को ध्यान में रखकर उन्हें प्रशिक्षण देकर तराशने का कार्य किया जाता है ताकि वे शिक्षण कला को और अधिक विकसित, रूचिपूर्ण और जीवनोपयोगी बना सकें। आज के समय की आवश्यकताएं प्राचीन समय की आवश्यकताओं से भिन्न हैं, अतः आज के शिक्षक प्रशिक्षण की कसौटियां विशेष प्रकार की हैं। शिक्षा का निजीकरण जब से हुआ है, शिक्षा सभी के लिए सुलभ तो अवश्य हुई है लेकिन शिक्षा की गुणवत्ता का दिनोंदिन ह्रास होता जा रहा है। शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय खोलने की होड़ सी मची हुई है, जिससे शिक्षण प्रशिक्षण की गुणवत्ता में कमी होती जा रही है क्योंकि इतनी अधिक संख्या में प्रशिक्षण महाविद्यालय खुलने से उनमें प्रवेश लेने वाले छात्रों की संख्या पूर्ति करने के लिए प्रवेश परीक्षा में शून्य अंक लाने वाले छात्र का भी प्रवेश कर दिया जाता है। ऐसे विद्यार्थी जिनकी शिक्षण में कोई रूचि नहीं होती प्रशिक्षण उपाधि प्राप्त कर लेते हैं। जब शिक्षण प्रकिया में ऐसे व्यक्ति आ जाते हैं जिन्हें शिक्षण प्रकिया के विषय में बिल्कुल ज्ञान नहीं होता और जो बाल मनोविज्ञान से बिल्कुल अनभिज्ञ होते हैं तो शिक्षण प्रकिया का विकास कैसे संभव है।

आज एक बार फिर से शिक्षण में सुधार के लिए प्रयास किये जा रहे हैं, जिससे शिक्षण की गुणवत्ता में अवश्य ही सुधार होंगे। प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों में बी0एड0 और एम0एड0 को द्विवर्षीय करने के पीछे भी यही उदेद्श्य है कि शिक्षकों को प्रशिक्षण अवधि में ही पर्याप्त व्यावहारिक एवं प्रयोगात्मक जानकारी प्रदान की जाए। जब प्रशिक्षण की अवधि में बढोत्तरी होगी तो प्रशिक्षण के पाठ्यक्म में भी सकारात्मक बढोत्तरी होगी जिससे छात्राध्यापक के अन्दर एक आदर्श अध्यापक के गुणों का विकास किया जा सकेगा। इस अवधि में छात्राध्यापक को छात्र और विद्यालय से संबंधित सभी पक्षों का गंभीरता के साथ अध्ययन कराया जाए जिससे भावी शिक्षक में गुणवत्ता का विकास हो।

शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने के लिए स्वतन्त्रता पूर्व और स्वतन्त्रता के पश्चात् काफी महत्वपूर्ण प्रयास किए गए। सन् 1835 का मैकाले का विवरण पत्र आया जिसमें अग्रेजी शिक्षा पर विशेष जोर दिया गया। सन् 1853 के वुड के घोषणा पत्र ने शिक्षा की तात्कालीन स्थिति की समीक्षा करके भारतीय शिक्षा में जो अनेक समस्याएं थी उनका अध्ययन किया। इस घोषणा पत्र को भारतीय शिक्षा के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। ब्रिटिश शिक्षा में अब तक जो कमियां थी वुड के घोषणा पत्र ने उन्हें दूर करके कर प्रयास किया गया।

3 फरवरी 1882 को भारतीय शिक्षा आयोग हण्टर कमीशन का गठन किया गया। इसमें प्राथमिक शिक्षा का विश्लेषण किया गया तथा देखा कि प्राथमिक शिक्षा के विकास मे क्या क्या अवरोध आ रहे हैं। शिक्षक प्रशिक्षण को सुधारने के लिए आयोग ने अपने महत्वपूर्ण सुझाव दिए। हर्टांग कमेटी ने प्राथमिक शिक्षा में काफी सराहनीय कार्य किया। उन्होंने शिक्षा में अपव्यय एवं अवरोधन के पीछे के प्रमुख कारणों पता लगाया जिससे प्राथमिक स्तर पर अपव्यय एवं अवरोधन को रोकने के लिए सराहनीय प्रयास किए गये। हालांकि यह बात सत्य है कि अपव्यय और अपरोधन की समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है। इसने अध्यापक शिक्षा को व्यवसाय प्रधान बनाने पर बल दिया। सन् 1944 की सार्जेण्ट योजना भी शिक्षण प्रशिक्षण के लिए मील का पत्थर साबित हुई। इसने प्रत्येक स्तर पर शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र खोलने की बात कही। सभी पाठ्यक्रमों के अभिनव पाठ्यक्रमों की व्यवस्था पर जोर दिया गया।

सन् 1948 में स्थापित राधाकृष्णन् आयोग ने भारत में उच्च शिक्षा सिर्फ परिक्षाएं पास करने तक ही सीमित होती जा रही थी। शिक्षा की गुणवत्ता में आ रही गिरावट का आयोग ने गहराई से अध्ययन कर अपने सुझाव प्रस्तुत किए। उच्च शिक्षा के लिए शिक्षण वर्ग के लिए विशेष प्रावधान सुझाए गये। शिक्षक प्रशिक्षण के लिए भी आयोग ने अपने सुझाव दिए। आयोग ने कहा कि शिक्षक प्रशिक्षण में सैद्वांतिक एवं प्रायोगिक कार्य दोनों पर समान बल दिया जाए तथा 12 सप्ताह का शिक्षण अभ्यास अनिवार्य किया जाए। कुछ वर्ष अध्यापन के बाद बी0एड0 परीक्षा उत्तीर्ण छात्रों को एम0एड0 में प्रवेश दिया जाए।

1952 में माध्यमिक शिक्षा की समस्याओं का अध्ययन करने के पश्चात् उनके निराकरण के लिए मुदालियर आयोग का गठन किया गया। मुदालियर आयोग ने माध्यमिक शिक्षकों के शिक्षण के लिए सुझाव दिये। आयोग के अनुसार प्रशिक्षण काल दो वर्ष का होना चाहिए। आयोग ने कहा कि प्राधानाध्यापक को उच्च वेतनमान दिया जाए जिससे योग्य व्यक्ति इस पद पर नियुक्त किए जा सके। सन् 1964 में डॉ डी0एस0 कोठारी की अध्यक्षता में गठित भारतीय शिक्षा आयोग ने शिक्षक शिक्षा के दोषों को स्पष्ट करके उन्हें दूर करने के लिए सुझाव प्रस्तुत किए। आयोग ने प्रशिक्षण की गुणवत्ता पर ध्यान देते हुए सभी शिक्षण संस्थाओं को शिक्षक प्रशिक्षण कॉलेज खोलने का सुझाव दिया। आयोग ने प्रशिक्षण अवधि के बारे में निम्नलिखित सुझाव दिये जो निम्नवत है :–

1. प्रशिक्षण स्नातक छात्रों के लिए एक वर्ष का होना परन्तु कार्य दिवसों की संख्या एक वर्ष में बढाकर 230 कर देनी चाहिए।
2. प्राथमिक शिक्षकों के लिए व्यवसायिक कोर्स की अवधि 2 वर्ष होनी चाहिए।
3. शिक्षा में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम की अवधि 3 सत्र कर देनी चाहिए तथा इसे संचालित करने हेतु उन्हीं संस्थाओं को अनुमति देनी चाहिए जो उचित और अर्ह शिक्षक रख सकें।

भारतीय शिक्षा आयोग ने प्रशिक्षण संस्थाओं की गुणवत्ता में सुधार करने के भी सुझाव दिए। आयोग ने शिक्षा के स्तर मे सुधार के लिए भी महत्वपूर्ण सुझाव दिए जो निम्नवत् हैः–

1. राष्ट्रीय स्तर पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को शिक्षक शिक्षा के स्तर के लिए उत्तरदायी होना चाहिए।
2. राज्य स्तर पर शिक्षा की राज्य परिषद् को स्तर के उन्नयन के लिए उत्तम होना चाहिए।
3. चौथी पंचवर्षीय योजना में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा शिक्षक शिक्षा के सुधार के लिए अलग से धन आवंटित करना चाहिए।
4. यू0जी0सी0 द्वारा एन0सी0ई0आर0टी0 के सहयोग से शिक्षक शिक्षा के लिए संयुक्त समिति गठित की जानी चाहिए।

भारतीय शिक्षा आयोग के बाद भारतीय शिक्षा नीतिओं के सुझाव भी काफी प्रसंशनीय रहे। वर्तमान समय में शिक्षा की गुणवत्ता को परखने के लिए वर्मा कमेटी ने काफी शोध करने के बाद अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें बताया गया कि भारत में स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में से 90: महाविद्यालय ऐसे हैं जो सिर्फ छात्रों के प्रवेश के लिए खुलते है, जिसमें शिक्षक प्रशिक्षण सिर्फ धनोपार्जन का माध्यम बन कर रह गया है। ऐसे प्रशिक्षण संस्थाओं पर जब तक रोक नही लगेगी तब तक शिक्षक प्रशिक्षण और शिक्षा की गुणवत्ता को बढाया नहीं जा सकता है।

शिक्षा की गुणवत्ता एवं शिक्षकों की प्रगति के लिए हमें प्रशिक्षण पर ही विशेष बल देना पडेगा तभी शिक्षा की गुणवत्ता में सकारात्मक परिवर्तन आएगा। प्रवेश परीक्षा में छात्रों को सफलता प्राप्त करने के लिए प्रेरित करना चाहिए जिससे वह प्रवेश परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त करके उत्तीर्ण होकर गर्व से प्रशिक्षण प्राप्त कर सकें। गुणवत्ता जब शिक्षकों के अन्दर होगी तो वह छात्रों के बीच अपने आप ही आ जाएगी।

lUnHk lph

1. भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्याएं – गुप्ता एवं ममता।
2. शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक मूल आधार – डॉ आर0 ए0 शर्मा।
3. कबीर ग्रन्थावली।
4. जस्टिस वर्मा कमेटी रिपोर्ट।